M.A. Fourth Semester

Third Paper

Agriculture Geography

BY

Dr. Shivanand Yadav

Assistant professor and Head

Department of Geography

Harishchandra P.G.College ,Varanasi

प्र०:- भारतीय कृषि पर हरितक्रान्ति के (पारिस्थितिक) प्रभाव का विवेचन कीजिए

अथवा

मशीनीकरण, रासायनीकीकरण, सिंचाई तथा संकरण भारत की हरित क्रान्ति के चार आधार स्तम्भ है। पंजाब तथा राजस्थान राज्यों के सन्दर्भ में इस कथन की विवेचना कीजिए।

हरितक्रान्ति :-

Green Revolution:- हरितक्रान्ति शब्द का प्रादुर्भाव 1968 में अन्तर्राष्ट्रीय विकास परिषद (IDC) के सामने अमेरिकी प्रशासक विलियम गॉड "William Goud" के उद्गारो से हुआ। जो उन्होंने उस समय 'हरित-क्रान्ति' के नाम से ही प्रपत्र प्रस्तुत किया था जिसका आशय विकासशील राष्ट्रों मे कृषि उत्पादन में आये परिवर्तन से था।

भारत मे हरित क्रान्ति का सूत्रपात कृषिजगत में क्रान्ति का सूत्र-पात कहा जाता है। क्योंकि कृषि भारत का वह वृहद् पैमाने पर किया जाने वाला व्यवसाय है जिसका प्रभाव विभिन्न क्षेत्रो मे होता है। भारत वैसे कृषि प्रधान राष्ट्र तो सदा से ही रहा है जहाँ कुल जनसंख्या का लगभग 70% (1997 के अनुसार) जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से कृषि जैसे व्यवसाय पर ही निर्भर करती है। तथा इस देश की आर्थिक संरचना का आधार ही कृषि है।

भारत में कृषि क्षेत्र मे उत्पादकता बढ़ाने के लिए पहला सफल संगठित प्रयास 1960-61 मे 'गहन कृषि जिला कार्यक्रम [Intensive Agricultural District Programme)-(IADP)] तथा (1964) गहन कृषि क्षेत्रीय कार्यक्रम [(Intensive Ag. Area Programme)-(IAAP)] के तहत पाइलट परियोजना के रुप में किया गया था। इस पहली योजना (IADP) की सफलता से उत्साहित होकर ही 1965 में इस नीति को द्वितीय योजना (IAAP) के अन्तर्गत चुने गये 114 जिलों में लागू किया।

तीसरी योजना अवधि के उपरान्त सरकार ने कृषि क्षेत्र में पैदा होने वाले गम्भीर संकटों का तकनीकी व वैज्ञानिक हल खोजने का प्रयास किया। इस प्रकार निर्धारित उद्देश्यो की प्राप्ति व नवीन रणनीति (New Strategy) अपनाने के लिए 1966-67 में तकनीकी व वैज्ञानिक आधार पर

कृषि में विकास व परिवर्तन की दिशा को ही भारत में 'हरित क्रान्ति' कहा गया था। हरित क्रान्ति से हमारा अर्थ सिंचित और असिंचित कृषि क्षेत्रों में अधिक उपज देने वाली किस्मों को आधुनिक कृषि पद्धति से उगाकर कृषि उत्पादन में अधिक वृद्धि करना है।" जार्ज हरार के शब्दों में " हरित क्रान्ति शब्द का प्रयोग पिछले दशक में विभिन्न देशों (भा०, फिलीपाइन्स, श्रीलंका, पाक, थाइलैण्ड आदि) में खाद्यान्नों के उत्पादन में होने वाली आश्चर्यजनक वृद्धि के लिए किया जाता है। इस क्रान्ति का मुख्य आधार नवीन अधिक उपज देने वाली बीजों का प्रयोग है जिससे कृषक तीन से चार गुने तक उत्पादन प्राप्त कर सकता है।" स्व० श्रीमती इन्दिरा गांधी के शब्दों में :" हरित क्रान्ति का आशय यह नहीं कि खेतों की मेड़बंदी करवाकर, फावड़े, तगारी, गैंती, हल, बक्खर आदि अन्य यंत्रों के प्रयोग से कृषि उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि करना है; बल्कि भारत में हरित क्रान्ति लाने का श्रेय भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा कृषि विश्वविद्यालयों के वैज्ञानिकों एवं कृषकों को जाता है।"

⟹ " नई कृषि नीति की सफलता के लिए आवश्यक था कि सिंचाई की नियंत्रित व्यवस्था के साथ-साथ, रासायनिक उर्वरकों, संकर बीजों और कीटनाशक दवाओं का प्रयोग किया जाय। इसी बात को ध्यान में रखते हुए 1966 में नई कृषि युक्ति को एक पैकेज कार्यक्रम के रूप में शुरू किया गया। चौथी योजना के प्रारम्भिक चरण में यह कार्यक्रम 18 लाख 90 हजार हेक्टेअर भूमि पर लागू किया गया। 1992-95 तक यह कार्यक्रम 6 करोड़ 60 लाख हेक्टेअर पर अपनाया जा चुका था जो कुल कृषि क्षेत्र का 36.5% है)

हरित क्रान्ति के प्रभाव !— कृषि क्षेत्र में हरित क्रान्ति के प्रभावों का विश्लेषण निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है।

(1) उत्पादन में वृद्धि :- (उत्पादन व उत्पादकता पर प्रभाव) "Increase in Production" 1960-70 के मध्य से अर्थात् तीसरी योजनावधि से नई कृषि युक्ति के परिणाम स्वरूप खाद्यान्नों के उत्पादन में तेज वृद्धि हुई। तीसरी योजना में खाद्यान्नों के उत्पादन का वार्षिक औसत 8 करोड़ 10 लाख टन था। जो 1975-76 के आस-पास बढ़कर 11 करोड़ 81 लाख टन हो गया। 1992-93

से खाद्यानों का उत्पादन तेजी के साथ बढ़कर 18 करोड़ टन तक पहुँच गया।

नई कृषि नीति के अन्तर्गत उन्नत किस्म के बीजों का कार्यक्रम केवल खाद्य फसलों गेहूँ, चावल, ज्वार, बाजरा तथा मक्का के लिए अपनाया गया था। अखाद्य फसलों को नई नीति से बाहर रखा गया। खाद्यान फसलों के अन्तर्गत, गेहूँ के क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई। गेहूँ का तीसरी योजना में प्रतिवर्ष औसत उत्पादन 1 करोड़ 11 लाख टन था। यह 1974-75 में बढ़कर 2 करोड़ 48 लाख टन तथा 1992-93 में बढ़कर 5 करोड़ 68 लाख टन हो गया। गेहूँ की प्रति हेक्टेअर उत्पादकता 1960-61 में जहाँ 851 किग्रा थी; 1992-93 में बढ़कर 2323 किग्रा तक पहुँच गयी। जहाँ तक चावल का संबंध है तीसरी योजना में औसत वार्षिक उत्पादन 3 करोड़ 51 लाख टन था, छठी योजना में 5 करोड़ 45 लाख टन तथा 1992-93 में बढ़कर 7 करोड़ 26 लाख टन हो गया।

जहाँ तक दालों का प्रश्न है द्वितीय योजना के समय दालों का औसत वार्षिक उत्पादन 1 करोड़ 17 लाख टन था जो 1992-93 में मात्र 19 लाख टन बढ़कर 1 करोड़ 36 लाख टन था। तिलहनों का उत्पादन हाल के वर्षों में बढ़ा है। छठी व सातवीं योजना में तिलहनों के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के उद्देश्य से सरकार ने 1985-86 में "राष्ट्रीय तिलहन विकास परियोजना" मई 1986 में 'तिलहनों का तकनीकी मिशन' तथा 1987-88 में "तिलहन उत्पादन वृहत् कार्यक्रम" शुरू किये। फलस्वरूप तिलहनों के आधीन क्षेत्र में तेज वृद्धि हुई है। चौथी योजना में तिलहनों का औसत वार्षिक उत्पादन 83 लाख टन था। 1987-88 में तिलहनों के आधीन क्षेत्र में वृद्धि होने से उत्पादन 1 करोड़ 27 लाख टन था और यह 1992-93 में बढ़कर 2 करोड़ 30 लाख टन हो गया।

(ii) क्षेत्रीय असमानताओं पर प्रभाव :-
(Impact on Regional Inequalities)

नई कृषि नीति का क्षेत्र सीमित रहा है। यह कुल कृषि योग्य भूमि के एक तिहाई से थोड़ा अधिक क्षेत्र तक ही सीमित रहा है। नई कृषि नीति के प्रभाव लम्बे समय बाद भी केवल गेहूँ उत्पादन करने वाले क्षेत्रों तक सीमित है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि हरित क्रान्ति से लाभान्वित होने वाला क्षेत्र कम रहा है।

लाभान्वित होने वाले प्रमुख क्षेत्र है - पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उ०प्र०
खाद्यान्न उत्पादन में विभिन्न क्षेत्रों का हिस्सा निम्न सारणी से स्पष्ट है।:-

[खाद्यान्न उत्पादन में विभिन्न क्षेत्रों का हिस्सा] (कुल का प्रतिशत)

क्षेत्र	1970-71 से 1972-73 (औसत)	1990-91 से 1992-93 (औसत)
1 उत्तरी राज्य (पंजाब, हरियाणा, प० उ० प्रदेश)	29.5	37.2
2 पूर्वी राज्य (उड़ीसा, असम, बिहार, पश्चिमी बंगाल)	22.3	19.2
3. पश्चिमी राज्य (गुजरात, महाराष्ट्र)	7.9	9.3
4. दक्षिणी राज्य (आन्ध्रप्रदेश, तामिलनाडु, कर्नाटक, केरल)	20.3	16.3
5. राजस्थान तथा मध्यप्रदेश	17.2	15.3
6. अन्य राज्य तथा केन्द्र शासित केन्द्र	2.8	2.7
कुल	100.0	100.0

Sources: Data of 1970-71 to 1972-73; S. Gangadheran.. The Economic Times Nov. 1990 & for 1990-91 to 1992-93; Government of India, Economic Survey 1993-94.

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि उत्तरी-राज्यों- पंजाब, हरियाणा, और उत्तर-प्रदेश का खाद्यान्न उत्पादन में हिस्सा 1970-71 से 1972-73 के बीच औसतन 29.5% था, जो 1990-91 से 1992-93 के बीच बढ़कर औसतन 37.2% हो गया। पश्चिमी राज्यों गुजरात तथा महाराष्ट्र के हिस्से में इसी अवधि में थोड़ी वृद्धि 7.9% से 9.2% हुई जबकि अन्य सभी राज्य समूहों के हिस्से में कमी आयी। इन तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि नई कृषि नीति के कारण क्षेत्रीय असमानताओं में वृद्धि हुई है।

परन्तु सी० एच० हनुमन्त राव (C.H. Hanumantha Rao) ने दावा किया है कि 1978-79 के बाद क्षेत्रीय असमानताएं उतनी व्यापक नहीं है

जितनी की 1967-68 से 1971-72 के दशक में थी। इसका प्रमुख कारण हनुमन्त राव पिछले दशक के दौरान पिछड़े व निर्धन राज्यों में खाद्यान्न उत्पादन में हुई आशातीत वृद्धि मानते हैं। जैसे 1968-78 के दौरान बिहार में खाद्यान्न उत्पादन में 1.14% प्रतिवर्ष की वृद्धि हुई थी जो कि 1978-88 के दौरान बढ़कर 3.52% प्रतिवर्ष हो गयी। इसी अवधि में मध्य-प्रदेश में खाद्यान्न उत्पादन की वृद्धिदर 1.23% प्रतिवर्ष से बढ़कर 4.36% प्रतिवर्ष हो गयी तथा 1978-79 से 1988-89 के बीच पूर्वी राज्यों में चावल उत्पादन की वृद्धि दर भी बढ़ी है।

(iii) **अन्त: वैयक्तिक असमानताएं :-**
(Inter-Personal Inequalities)

नई कृषि नीति के लिए बड़ी मात्रा में निवेश की आवश्यकता थी; जिसके लिए क्षमता केवल बड़े किसानों के ही पास थी तथा बड़ी मात्रा में निवेश कर पाना छोटे किसानों की सीमा के बाहर था। इसीलिए हरित क्रान्ति के आरम्भ में नई कृषि नीति के लाभ छोटे व सीमान्त किसानों की तुलना में बड़े किसानों को ही अधिक मिले, परिणाम स्वरूप वैयक्तिक असमानताएं बहुत अधिक बढ़ी हैं।

बाद में नई कृषि नीति के बारे में बढ़ती जानकारी के परिणाम स्वरूप छोटे किसानों ने धीरे धीरे नई कृषि नीति को अपनाना शुरु कर दिया। इस प्रकार हरित क्रान्ति के लाभ छोटे किसानों को भी पहुँचने लगा है। उदाहरणार्थ: जी॰ एस॰ भल्ला व जी॰ के॰ चड्ढा पंजाब के छोटे व सीमान्त किसानों पर हरित क्रान्ति के प्रभाव का अध्ययन करते हुए इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि "पंजाब में हरित क्रान्ति के आगमन से सभी किसान वर्गों को कुल मिलाकर लाभ हुआ है।

(iv) **खेतिहर मजदूरों के लिए रोजगार व वास्तविक मजदूरी पर प्रभाव :-**

इस संबंध में सभी अध्ययनों के निष्कर्ष एक जैसे नहीं पाये जाते; कुछ के अनुसार कृषि क्रान्ति के फलस्वरूप खेतिहर मजदूरों में बेरोजगारी बढ़ी है और उनकी वास्तविक मजदूरी में कमी आयी है परन्तु कुछ अध्ययनों के अनुसार खेतिहर मजदूरों की स्थिति में सुधार हुआ है। वस्तु स्थिति यह है कि शुरु में कृषि कार्यों में वृद्धि होने से श्रम की माँग बढ़ती है, लेकिन कालान्तर में यंत्रीकरण के बढ़ने से बेरोजगारी भी बढ़ने लगती है।

(v) विभिन्न प्रदेशों के बीच आय के वितरण पर प्रभाव :- हरितक्रान्ति के कारण विभिन्न प्रदेशों के बीच आय की असमानताएं बढ़ी हैं, क्योंकि उपज देने वाली किस्मों का उपयोग चुने हुए क्षेत्रों में किया गया है। इसीलिए कुछ क्षेत्रों में नई कृषि पद्धति तथा कुछ में परम्परागत कृषि पद्धति अपनाये जाने के कारण आय में क्षेत्रीय असमानता का बढ़ना एक स्वाभाविक बात है।

(vi) हरितक्रान्ति का भूमि सुधारों की सम्भावना पर प्रभाव :- हरितक्रान्ति में धनिक कृषक राजनीतिक दृष्टि से भी सबल हो गये हैं। इसलिए वे अपने प्रगतिशील भूमि-सुधारों के मार्ग में बाधा डालते हैं। परिणामस्वरूप राज्य सरकारें भूमि-सुधार कानूनों को लागू करने में असमर्थ रही हैं। देहातों में वर्ग संघर्ष व जाति संघर्ष बढ़े हैं और भूमिहीनों को अपने हितों की रक्षा के लिए बड़े कृषकों से संघर्ष करना पड़ रहा है।

(vii) किसानों के दृष्टिकोण में परिवर्तन :- Changes in the Attitude of farmers: समय के साथ-साथ हरितक्रान्ति के फलस्वरूप किसानों के दृष्टिकोण में भी काफी परिवर्तन आये हैं। बड़े तथा मध्यम श्रेणी के किसान कृषि की आधुनिक तथा मंहगी तकनीकों का प्रयोग कर व्यावसायिक दृष्टिकोण से खेती करने लगे हैं। छोटे किसान भी साधनों की प्रतिकूलता के बावजूद परम्परागत खेती को छोड़कर नये ढंग से खेती करने की हर सम्भव कोशिश कर रहे हैं। इस प्रकार हरित क्रान्ति के बाद नयी कृषि नीति से कृषि में संरचनात्मक परिवर्तन हुए हैं

उत्पादकता की वृद्धि के परिप्रेक्ष्य में विभिन्न खाद्यान्न एवं तिलहन फसलों की उत्पादकता का विवरण (1953-54 एवं 1994-95) अग्र (लिखित है) पृष्ठ पर (दर्शाया गया है) द्रष्टव्य है ——

विभिन्न खाद्यान्न एवं तिलहन फसलों की उत्पादकता किग्रा प्रति हेक्टेयर (1953-54 से 1994-95)

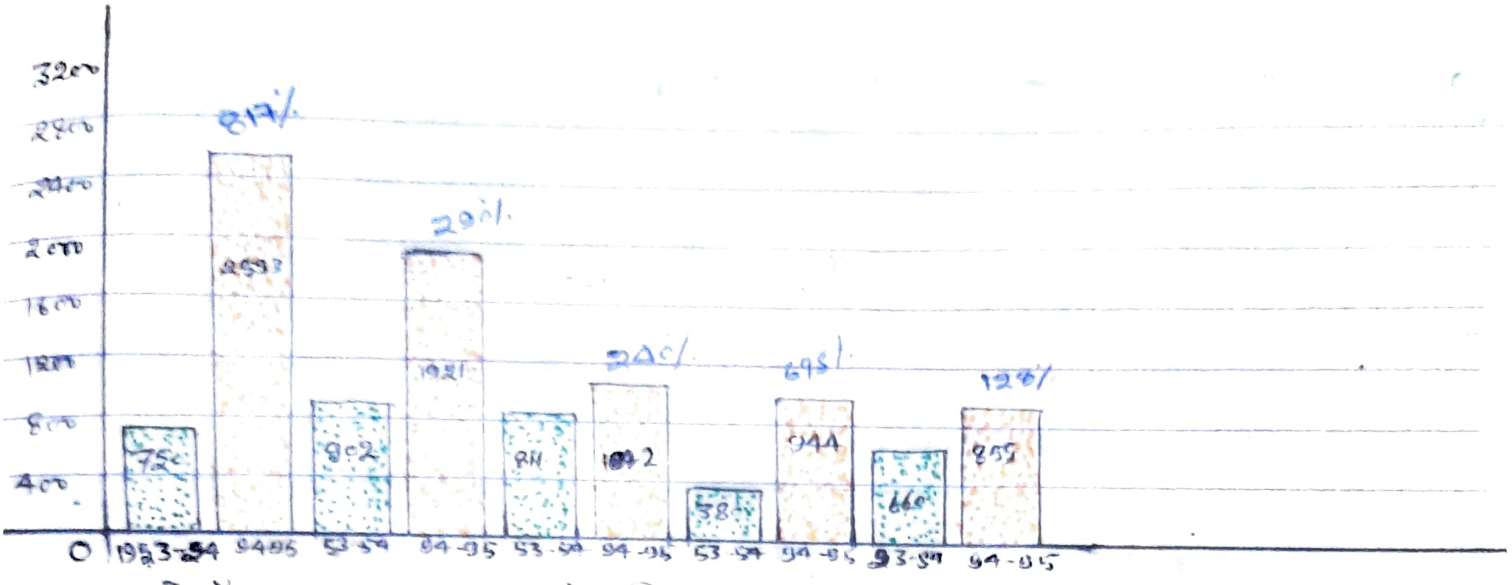

स्पष्टतः पाँचवें दशक के उपरान्त खाद्यान्न उत्पादन में काफी वृद्धि अंकित की गयी। सर्वाधिक वृद्धि गेहूँ में 817% रही जबकि चावल में 290% पाई गयी। मक्का उत्पादन में 1994-95 के आँकड़ों के अनुसार लगभग 300% की वृद्धि प्राप्ति हुई। दलहन उत्पादन में 1953-54 से 1994-05 तक लगभग 133% की वृद्धि आँकी गयी। जबकि सर्वाधिक वृद्धि चने में 128% रही। तिलहन उत्पादन का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि 1953-54 से 1994-95 तक कुल तिलहन उत्पादन में लगभग 400% की वृद्धि की प्राप्ति हुई। जबकि सर्वाधिक वृद्धि दर सरसों फसल के उत्पादन में 695% प्राप्त हुई। मूँगफली की फसल के लिए पैदावार में 240% की वृद्धि पायी गयी है।

खाद्यानों की राज्यवार उत्पादकता

(कि॰ग्रा॰ प्रति हेक्टेयर)

राज्य	खाद्यान्न उत्पादकता 1967-68	1990-91	राज्य	1967-68	1990-91
आन्ध्र प्रदेश	778	1618			
उड़ीसा	779	982			
उ॰ प्र॰	871	1733			
कर्नाटक	646	918			
तामिलनाडु	1136	1925	केरल	1346	1875
पंजाब	1511	3390	गुजरात	657	1048
बिहार	877	1298	प॰ बंगाल	1021	1728
महाराष्ट्र	518	846	म॰ प्रदेश	635	1005
अखिल भारतीय	783	1382	राजस्थान	532	866

मशीनीकरण (कृषि कार्यन्त्रीकरण) Mechanisation of Agriculture)

आज पश्चिमी देशों में कृषि के विकास का एक प्रमुख कारण यह है कि इन देशों के किसान उन्नत तथा अद्यतन फार्म मशीनरी (up-to-date Farm Machinery) का प्रयोग करते हैं। कृषि क्षेत्र में मशीनरी के प्रयोग द्वारा कम लागत में अधिक उत्पादन किया जा सकता है। तथा बंजर भूमि को भी कृषि के अधीन लाया जा सकता है।

कृषि में मशीनों का उपयोग ठीक वैसा ही है जैसा किसी विषय में सांख्यिकी (Statistics) का। क्योंकि यह उसके गुणात्मक अभिव्यक्ति की परिचायक होती है। भारत जैसे देश में जहाँ मशीनों का प्रयोग एक अजूबा था, ने क्रान्तिकारी परिवर्तन कर कृषि के रूप को ही बदल दिया विदेशों में जो विकसित देश आगे बढ़े हैं वहाँ तो कृषि में मशीनों के उपयोग से उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। भारत जैसे देश जहाँ कठोर जमीन थी, जिसे लकड़ी के हल से जोता जाता था वहाँ लोहे के हल ने यह काम आसान कर दिया। भारत में अब प्रत्येक गाँव में कम से कम ट्रैक्टर तथा इससे चालित उपकरण मिल ही जाते हैं। कुओं पर मोटर व अनेक काम की मशीनें गाँवों में आवाज करती सुनाई दे ही जाती हैं। मशीनों के उपयोग को व्यापक बनाने के लिए सरकार ने किसानों को कम ब्याज पर ऋण व्यवस्था प्रारम्भ की। इनके प्रयोग से किसानों के काम करने के तरीके भी बदले तथा इनकी कार्यक्षमता भी बढ़ी। इस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों में खुशहाली आ गयी। एक किसान दूसरे की खुशहाली देखकर उसकी तकनीक अपनाने की कोशिश करता है। इस प्रकार कृषि जगत में भी मशीनों का उपयोग व्यापक होने लगा।

भारतीय कृषि की विभिन्न विशेषताओं जैसे- जोतों का छोटा आकार, कृषि कार्य में लगी जनसंख्या का बहुत बड़ा आकार आदि को ध्यान में रखते हुए चयनात्मक यंत्रीकरण यहाँ पर उचित माना जा सकता है छठी योजना में कहा गया कि :- "कृषि कार्यों पर अनियंत्रित यंत्रीकरण हमारे देश के हित में नहीं होगा, इससे देहातों में बेरोजगारी की समस्या विकट हो जायेगी। इस प्रकार चयनात्मक यंत्रीकरण की नीति को अपनाया जायेगा।" चयनात्मक यंत्रीकरण की नीति द्वारा, ट्रैक्टरों, डीज़ल

बीजन संकर बीजों, ट्यूबवैल आदि के उत्पादन में तेजी के साथ प्रगति हुई है। एक ओर जहाँ हरित क्रान्ति वाले राज्यों पंजाब, हरियाणा व प.उ.प्रदेश में यन्त्रीकरण तेज गति से बढ़ा है वहीं बहुत से अन्य राज्यों (राजस्थान) में इस दिशा में विशेष महत्वपूर्ण प्रगति नहीं हो पायी है।

रासायनीकरण :- (उर्वरक उपयोग) (Use of fertilizers)

हरित क्रान्ति का दूसरा महत्वपूर्ण आधार रासायनिक उर्वरक जिसमें विशेषकर एन.पी.के. (NPK) के उर्वरक प्रमुख हैं का उपयोग है। उर्वरकों के प्रयोग से भूमि की नष्ट होने वाली उर्वरा शक्ति को पुन: प्राप्त किया जा सकता है जिसके फलस्वरूप उत्पादन बढ़ाना सम्भव होता है। एन.पी.के. उर्वरकों में नाइट्रोजन युक्त उर्वरक (Nitrates) फास्फोरस, पोटाश जैसे तत्वों से युक्त व इनके अनुपात के आधार पर उपयोग महत्वपूर्ण होता है। उर्वरकों के उपयोग ने वास्तव में कृषि जगत में क्रान्ति लादी है। बड़े पैमाने पर कृषि में परिवर्तन का श्रेय रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग को जाता है।

खेती योग्य भूमि पर नई तकनीक द्वारा सघन खेती करने में उर्वरकों का उपयोग मुख्य है। यद्यपि भारत दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा उर्वरक उत्पादक देश है फिर भी हमारे देश में उर्वरक खपत (एन.पी.के. पोषकतत्व) बहुत ही कम है जो लगभग 68 kg/हेक्टेअर कृषि भूमि एवं 73 kg/हेक्टेअर सिंचित भूमि है। यह दूसरे देशों की तुलना में काफी कम है। वर्तमान समय में उर्वरकों की वार्षिक खपत 0.9 करोड़ टन के लगभग है। सन् 2000 ई. तक लगभग 2 करोड़ टन उर्वरक प्रतिवर्ष उपयोग करना पड़ेगा।

एन.पी.के. उर्वरक तत्वों के उत्पादन (Production) एवं उपभोग (Consumption) का विश्व में भारत का स्थान (1993-94) (Rank)

(उर्वरक तत्व)	(उत्पादन)	(उपभोग)
नत्रजन	III	III
फास्फोरस	IV	III
पोटाश	—	V
योग	III	III

कृषि योग्य भूमि पर कुछ चुने देशों में उर्वरक तत्वों (NPK) का उपभोग। (1993-94) (किग्रा/हेक्टेयर)

देश	(एन.पी.के.)
कोरिया गणराज्य	454
मिस्र	357
जापान	355
इंग्लैण्ड	121
भारत	68
विश्व औसत	(95)

(स्रोत :- फर्टिलाइज़र स्टैटिस्टिक्स 1994-95 FAI नई दिल्ली)

लगभग 50% खाद्यान्न उत्पादन में बढ़ोतरी मात्र उर्वरक उपयोग से ही होती है इसलिए किसानों को उर्वरक उपयोग के सही तरीके बताना ही एक सही कदम होगा।

भारत में योजनाकाल में कृषि के तकनीकी विकास के साथ-साथ उर्वरकों के उपयोग में भी तेज वृद्धि हुई है। 1952-53 में उर्वरकों का उपभोग 66000 टन था जो बढ़कर 1970-71 में 21.8 लाख टन हो गया और 1992-93 तक बढ़ते-बढ़ते 121.5 लाख टन तक पहुँच गया। भारत के विभिन्न राज्यों में उर्वरकों की खपत के अनुपात में बहुत अन्तर है जैसे 1990-91 में पंजाब में प्रति हेक्टेयर उर्वरक का उपयोग 171.2 kg था वहीं असम में यह 10.5 kg था। देश में वर्ष 1993-94 में औसत प्रति हेक्टेयर उर्वरकों का उपयोग 72.4 kg था।

परन्तु पर्यावरण के प्रदूषित होने के कारणों में एक प्रमुख कारण रसायनों का दिन प्रतिदिन बढ़ता उपयोग है अतः नीले हरे शैवाल का उर्वरक के रूप में प्रयोग होता है क्योंकि जहाँ ये प्राकृतिक रूप से भूमि की उर्वरा-शक्ति को बढ़ाते हैं वहीं रासायनिक उर्वरकों से भूमि को होने वाले नुकसान को भी इसके प्रयोग से रोका जा सकता है।

सिंचाई :- कृषि की उत्पादकता को प्रभावित करने वाले तत्वों में सिंचाई का प्रमुख स्थान है। अधिक उत्पादक बीजों का प्रयोग तभी सम्भव है जब इनके अनुकूल सिंचाई की सुविधा उस समय पर उपलब्ध हो। सिंचाई सुविधाओं के उपलब्ध रहने पर अच्छे बीजों, उर्वरकों और नई कृषि तकनीकों के प्रयोग से उत्पादकता को बहुत अधिक मात्रा तक बढ़ाया जा सकता है। किसी भी फसल से अधिकतम व उपयुक्त उत्पादन तभी सम्भव है जबकि वांछित समय में उपयुक्त सिंचाई की जा सके। राजस्थान :- जहाँ वर्षा बहुत कम ही हो पाती है नये बीजों का प्रयोग अभी सीमित रूप से हुआ है। लेकिन पंजाब जैसे राज्य जहाँ नयी कृषि नीति में नई तकनीकी व नये बीजों का प्रयोग काफी हद तक हुआ है, इन क्षेत्रों में सिंचाई के साधनों में भी काफी अधिक विकास किया गया है। सारे ही क्षेत्र में नहरों का जाल बिछा हुआ है तथा अच्छी सिंचाई की जाती है। सिंचाई की सुविधाएं सरकारी आधार पर उपलब्ध करायी जा रही हैं तथा अच्छी किस्म के बीज भी सरकार उपलब्ध करा रही है।

भारत में विभिन्न योजनाओं के तहत यद्यपि सिंचाई सुविधाओं में काफी विस्तार किया गया है तथापि आज इसकी प्रतिशतता मात्र 33% के लगभग है अर्थात 67% क्षेत्र वर्षा पर निर्भर है।

राजस्थान : प्रमुख नदियाँ (1) अरब सागर में जल ले जाने वाली नदियाँ लूनी, माही, सोम, जोखम, पश्चिमी बनास और साबरमती।

(2) बंगाल की खाड़ी को जल ले जाने वाली नदियाँ :- चम्बल, बनास, बेड़च, कोठारी, पार्वती, खारी, काली सिन्ध और बाणगंगा।

(3) आन्तरिक जल प्रवाह की नदियाँ : घग्घर, कान्तली, साबी, काकनी, मन्था।

पंजाब में यमुना, सतलज, रावी और व्यास यहाँ की सतत वाहिनी नदियाँ हैं। बरसाती नदियों की संख्या यहाँ होशियारपुर जिले में सब से अधिक है।

वर्तमान में सिंचाई सुविधाएं :

1950-51 में 226 लाख हेक्टेयर भूमि को कुल सिंचाई प्राप्त थी जो 1992-93 में बढ़कर 834 लाख हेक्टेयर हो गयी। भारत में सिंचाई योजनाओं को परियोजना व्यय के आधार पर तीन वर्गों में बाँटा गया है - बड़ी, मंझौली और लघु परियोजनाएं।

1978-79 से योजना आयोग ने सिंचाई परियोजनाओं का नया वर्गीकरण चालू किया है।

(a) बड़ी सिंचाई योजनाएं :- जिनके नियंत्रण-आधीन 10000 हैक्टेयर से अधिक कृषि क्षेत्रफल हो।

(b) मध्यम सिंचाई योजनाएं :- जिनके नियंत्रण-आधीन 2000-10000 हैक्टेयर कृषि क्षेत्रफल हो।

(c) छोटी सिंचाई योजनाएं :- जिनके नियंत्रण-आधीन 2000 हैक्टेयर तक क्षेत्रफल हो।

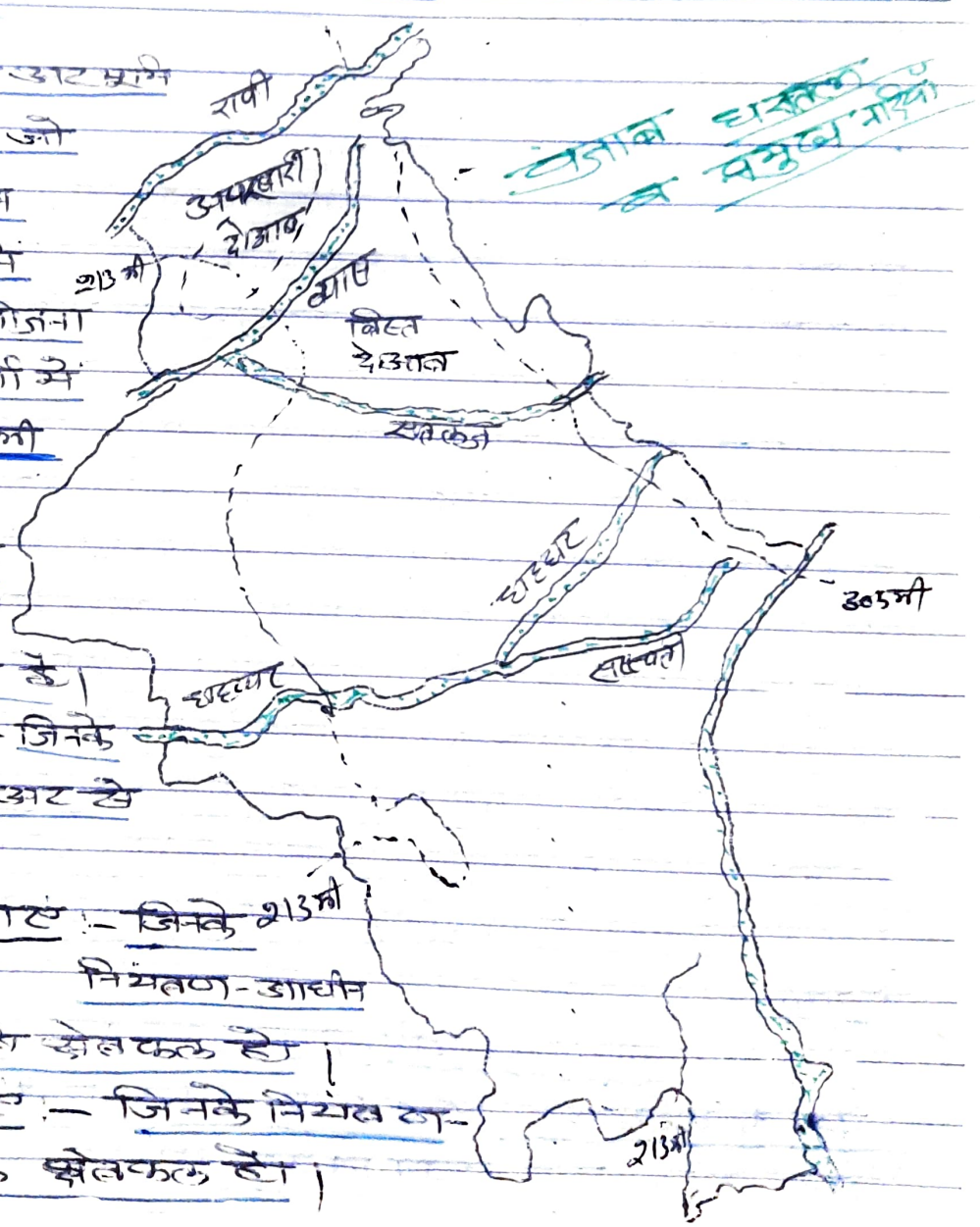

भारत में सिंचाई के विभिन्न साधन निम्नलिखित हैं—

नहरों से सिंचाई :- [Irrigation by Canals] नहरों को सिंचाई के साधनों में महत्व पूर्ण स्थान प्राप्त है। 1987-88 में कुल सिंचित भूमि क्षेत्र के 36% भूमि पर नहरों द्वारा सिंचाई की सुविधा प्राप्त थी। भारतीय नहरों की लम्बाई लगभग 1 लाख 20 हजार किमी है। पंजाब, हरियाणा, उ०प्र० तथा बिहार में नहरों द्वारा सिंचाई व्यवस्था काफी विकसित हो चुकी है। राजस्थान आदि बहुत से राज्यों में भी नहरों द्वारा बहुत बड़ा कृषि क्षेत्र सिंचित है।

तालाबों द्वारा सिंचाई :- दक्षिणी भारत में तालाब सिंचाई का महत्व पूर्ण साधन है परन्तु कम वर्षा होने से तालाब सूख जाते हैं। 1987-88 में तालाबों/जलाशयों द्वारा 28 लाख हेक्टेअर भूमि पर जो कि कुल सिंचित क्षेत्र का 6.5% था, सिंचाई की व्यवस्था थी।

कुओं द्वारा सिंचाई :- कुओं द्वारा 1987-88 में 2 करोड़ 18 लाख हेक्टेअर भूमि में सिंचाई की व्यवस्था थी जो कुल सिंचित क्षेत्र का 51% है। कुएं दो प्रकार के होते हैं सादे कुएं और नलकूप। पंजाब, हरियाणा और पं० उ०प्र० में कृषि के वाणिज्यीकरण हो जाने से नलकूपों की माँग में बहुत अधिक वृद्धि हुई है।

संकरण :- फसलों से अधिक उत्पादन लेने के लिए अनुसंधान प्रयासों के फलस्वरूप संकर किस्मों का विकास किया गया है जिसके द्वारा सामान्य किस्मों के मुकाबले बहुत अधिक उत्पादन किया जा सकता है। उन्नत बीजों के प्रयोग से लगभग 10 से 20% तक उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने उन्नत बीजों का विकास करने और उन्हें लोकप्रिय बनाने के लिए महत्वपूर्ण कार्य किये हैं। जैसे विश्व में प्रसिद्ध गेहूँ और धान की कुछ सर्वोत्तम किस्मों का विकास भारत में किया जा रहा है। 1973-74 में जहाँ 260 लाख हेक्टेअर भूमि उन्नत बीजों के आधीन थी वहीं 1991-92 में यह बढ़कर 670 लाख हेक्टेअर हो गयी।

धान की बीसियों संकर किस्मों में A.P.H.R-1, A.P.H.R-2 आन्ध्र प्रदेश के लिए तथा M.G.R-2 तमिलनाडु के लिए प्रमुख है। गेहूँ के लिए क्रीतिकल की एक उन्नत किस्म डी.टी-46 जारी की गयी है।

ज्वार में बहुकटाई वाली (Multi cut) संकर ज्वार P.C.H-106 तथा हरा सोना विकसित की गयी है। मक्का में एकल संकल, संकर चारस तथा हिसंकरण जे० एच० -302 जारी की गयी है।

कद्दू की नई संकर किस्म पूसा हाइब्रिड नं०1 की पहचान की गयी है। इसे उत्तर भारत में पंजाब और दिल्ली में सफलता पूर्वक लगाया जा सकता है। यह नई किस्म पूसा विश्वास की तुलना में 30% अधिक पैदावार देती है।

इस प्रकार निश्चय ही संकर किस्मों के उपयोग के कारण उत्पादन में वृद्धि हुई है। आज वर्तमान में अपने देश में लगभग 37 मिलियन टन खाद्यान्न का बफर स्टॉक है जिसका मुख्य श्रेय हरित-क्रान्ति के फलस्वरूप नीति निर्धारकों, कृषि वैज्ञानिकों, विकास अधिकारियों को जाता है जिसमें कृषकों का योगदान सर्वोपरि है। अतः निश्चय ही फसलों की संकर किस्मों ने अधिक पैदावार प्राप्त करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

इस प्रकार निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि "मशीनीकरण, रासायनीकरण, सिंचाई और संकरण भारत की हरितक्रान्ति के चार आधार स्तम्भ हैं बिना इनके उपयोग के हरितक्रान्ति की सफलता के बारे में सोचना भी निरर्थक ही होगा।